International Journal for Multidisciplinary Research (IJFMR)

E-ISSN: 2582-2160 ● Website: www.ijfmr.com ● Email: editor@ijfmr.com

जिद्दू कृष्णमूर्ति के दार्शनिक एवं शैक्षिक विचारों की वर्तमान में उपादेयता

नीरज वर्मा[1], डॉ.अखिलेश[2]

[1]शोध अध्येता, डॉ० राम मनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय, अयोध्या, उ०प्र० (भारत)

[2]एसोसिएट प्रोफेसर, शिक्षक शिक्षा विभाग, रामनगर पी० जी० कालेज रामनगर, बाराबंकी (उ०प्र)

सारांश

भारतीय वसुंधरा धर्म, शिक्षा, न्याय, सभ्यता, विज्ञान, कला आदि मानव जीवन की आवश्यक प्रवृत्तियों की जन्मभूमि है। पशु को मनुष्य बनाने की सभ्यता व संस्कृति का उद्भव यही हुआ। भारतीय सभ्यता मानवता की, समस्त मनुष्य जाति की अत्यन्त ही विवेक एवं दूरदर्शिता से भरी हुई जीवन पद्धति है। इसे अपनाकर मनुष्य अगणित विकृतियों और बुराइयों से बचकर सुख, समृद्धि, सफलता और सद्गति का अधिकारी बनता है। इसमें अन्धविश्वास या मूढ़ परम्परा के लिए रत्तीभर भी स्थान नहीं है। यह देश स्वर्ग की अपेक्षा भी श्रेष्ठ समझा जाता था। अतीत का इतिहास इस तथ्य को मुक्त कण्ठ से उद्घोष कर रहा है। भारतीय शिक्षा का इतिहास बताता है कि भारत सदैव ज्ञान क्षेत्र में अग्रणी रहा है। जब विश्व के अन्य देशों में बर्बरता एवं असभ्यता विद्यमान थी तब भारत जगतगुरु के पद पर आसीन होकर विशाल वैदिक सभ्यता एवं साहित्य का निर्माण कर रहा था। कालान्तर में इस धरा पर अनेक विदेशी आक्रमण हुए और देश के समृद्ध शैक्षिक ढांचे को प्रभावित किया, फलस्वरूप अनेक शैक्षिक समस्याएँ उत्पन्न हुई। इन शैक्षिक समस्याओं के समाधान व प्राचीन शैक्षिक व्यवस्था की पुनर्स्थापना हेतु ऋषि–मुनियों, संत–महात्माओं, शिक्षाविदों, दार्शनिकों के विचारों का अनुशीलन आवश्यक है। इसी परम्परा में एक दार्शनिक जिद्दू कृष्णमूर्ति हुए, जिन्होंने भारतीय दर्शन को प्रभावित किया। इनकी गणना आधुनिक युग के श्रेष्ठ विचारकों में होती है। जे. कृष्णमूर्ति के मौलिक दर्शन ने सभी धर्म, सत्य और यथार्थपरक जीवन को आकर्षित किया। जे. कृष्णमूर्ति ने किसी दार्शनिक विचारधारा अथवा दार्शनिक संप्रदाय की व्याख्या नहीं कि अपितु उन्होंने मानवतावाद को आधार मानकर मानव के कल्याण पर बल दिया। उनके अनुसार वास्तविक दर्शन वह है जो हमारे जीवन में सत्य के लिए प्रेम जागृत करता है। उनके अनुसार बाहरी एवं आंतरिक जगत में होने वाले प्रत्येक स्पंदन का प्रतिक्षण बोध होना ही दर्शन है उनका विचार था कि एक ऐसे समाज का निर्माण हो जिसमें सादगी, प्रेम, सहयोग की भावना हो जिसमें सदैव प्राणी मात्र के प्रति प्रेम हो। एक ऐसे समाज का निर्माण हो जिसमें जाति, धर्म, समाज, संस्कृति आदि के आधार पर विभेद न हो तथा सभी प्रेम और सहयोग की भावना से बँधे रहे। जे. कृष्णमूर्ति ने धर्म, आध्यात्म, दर्शन, मनोविज्ञान व शिक्षा को अपनी अंर्तदृष्टि के माध्यम से नए आयाम प्रदान किए हैं। कृष्णमूर्ति के विचार न केवल दार्शनिक दृष्टिकोण से वरन भौतिक दृष्टि से भी अत्यंत महत्त्वपूर्ण हैं जो जाति, धर्म और संप्रदाय में उलझे, असमंजस में पड़े हुए लोगों का मार्गदर्शन करते प्रतीत होते हैं। उन्होंने मानव जीवन के लगभग समस्त पहलुओं पर अपने विचार प्रकट किये हैं। जे. कृष्णमूर्ति के जीवन का एकमात्र उद्देश्य विश्व को शांति, संतुष्टि और संपूर्णता प्रदान करना था जिससे ईर्ष्या, द्वेष और स्वार्थ का समूल नाश किया जा सके। कृष्णमूर्ति ने जिस तरह स्थापित परंपराओं को किनारे कर लोगों को आत्म साक्षात्कार की तरफ प्रेरित करने का काम किया था, वह उन्हें बीती सदी का सबसे अनोखा दार्शनिक बनाता है। उनकी समग्र जीवन दृष्टि, उनका दर्शन और सम्यक शिक्षा भारत ही नहीं वरन् सम्पूर्ण विश्व के लिए प्रासंगिक और महत्वपूर्ण है। प्रस्तुत शोध पत्र में जे. कृष्णमूर्ति के दार्शनिक एवं शैक्षिक विचारों की वर्तमान में उपादेयता का अध्ययन किया गया है।

मुख्य शब्द – समग्र शिक्षा, शांति, शैक्षिक विचार, सर्वांगीण विकास, मानवतावाद।

प्रस्तावना

शिक्षा मनुष्य समुदाय की स्वाभाविक विशेषता रही है, उसने सामाजिक विकास के हर युग में समाज को दिशा और स्वरूप देने में सहायता दी है। शिक्षा का विकास कभी अवरुद्ध नहीं हुआ उसने सदैव मनुष्य को सर्वोच्च आदर्शों की प्राप्ति हेतु उन्मुख किया है। वर्तमान समय में शिक्षा के प्रति जितनी रुचि है उतनी पहले कभी नहीं थी। आज का मानव शिक्षा को भविष्य की दृष्टि से देख रहा है क्योंकि आज की शिक्षा आर्थिक विकास की अगुवाई कर रही है। इस दृष्टि से कहा जा सकता है कि इतिहास में पहली बार शिक्षा, मनुष्य को उस समाज के लिये तैयार कर रही है जिसका निर्माण अभी तक नहीं हुआ है। शिक्षा के लिये यह चुनौती पूर्णतः नवीन है क्योंकि शिक्षा का अब तक का कार्य समकालीन समाज को उसी रुप में जीवित रखना और उसके सामाजिक सम्बन्धों को बनाये रखना था। परन्तु आज उसका लक्ष्य अपरिचित बालकों को अपरिचित दुनिया के लिये शिक्षित करना है। अतः शिक्षाशास्त्रियों के ऊपर यह दायित्व है कि वह समन्वित शिक्षा द्वारा समाज के भावी स्वरूप का निर्धारण करें। उनको इस दायित्व के लिये चिन्तन करना होगा। भारत अनेक धर्मावलम्बियों, संस्कृतियों और भाषा–भाषियों का स्थल रहा है। यद्यपि इस काल में अनेक भारतीय मनीषियों, समाज सुधारकों, सन्तों और विद्वानों ने भारतीय संस्कृति को पुनर्जीवित रखने का महान प्रयास किया। इन्होंने संगठनात्मक रूप से भारतीय शिक्षा प्रणाली की जो नींव रखी वह प्राचीन और आधुनिक शिक्षा का सम्मिश्रण थी फिर भी भारत की अधिकांश जनता अशिक्षित थी। इसी समय भारत में ब्रिटिश शिक्षा प्रणाली की नींव चार्ल्स ग्रांट और लार्ड मैकाले द्वारा तत्कालीन शासन की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर स्थापित की गई थी। सन् 1837 से मैकाले द्वारा स्थापित शिक्षा प्रणाली अनेक आयोगों और समितियों की सिफारिशों और नीतियों के फलस्वरूप आधुनिक भारतीय शिक्षा प्रणाली के रूप में विकसित हुई है। भारतीयों ने 15 अगस्त सन् 1947 में राजनैतिक स्वतन्त्रता तो अथक संघर्ष के बाद प्राप्त कर ली थी, किन्तु आत्मिक या आन्तरिक और मानसिक स्वतन्त्रता प्राप्त नहीं की। जिसके अभाव में मनुष्य में प्रज्ञा और आत्मबोध का विकास नहीं हुआ। मात्र बौद्धिक विकास से भारत ने यूरोप और अमेरिका का अन्धानुकरण किया है और विकासशील हो गया। जिसके फलस्वरूप आधुनिक युग में अनेक नवीन समस्याओं का जन्म हुआ है। भारत जो कि एक परम्परावादी धार्मिक देश रहा है उन समस्याओं का समाधान प्राचीन सूत्रों में खोजता रहा है जबकि चुनौतियां नवीन है, जिनका समाधान वर्तमान प्रज्ञा, अन्तर्दृष्टि, आत्मबोध और सत्यान्वेषण से सम्भव है। भारत और विश्व में मानव जीवन की मौलिक और भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति करना मात्र सरकारों और समाजों का उत्तरदायित्व रह गया है। किन्तु मनुष्य की प्रज्ञा, अन्तर्दृष्टि और आत्मबोध जाग्रत करना व्यक्तिगत ही नहीं बल्कि प्रत्येक का सामाजिक उत्तरदायित्व भी है। वर्तमान शिक्षा इस उत्तरदायित्व से विमुख हो गई है इसीलिए शिक्षा का अवमूल्यन हुआ है। सत्य की खोज के अभाव में मानवीय गरिमा का मानव सभ्यता और संस्कृति का पतन हुआ है। ऐसी विषम परिस्थितियों में व्यक्ति की मुक्त प्रतिभा, अन्तर्दृष्टि और आत्मबोध से सत्य और वास्तविकता के धरातल पर प्रत्येक समस्या का सामना और समाधान किया जा सकता है। ऐसे व्यक्ति और ऐसे समाज का निर्माण सम्यक शिक्षा और सम्यक दर्शन से ही सम्भव है। भारत में ऐसे अनेक व्यक्ति, दार्शनिक और सत्यान्वेषक हुए हैं जिनमें ऐसी प्रतिभा और अन्तर्दृष्टि थी, जिन्होंने शिक्षा के क्षेत्र में ही नहीं वरन् समग्र जीवन में आन्तरिक समृद्धि से मानव कल्याण किया है। जो भौतिक सम्पन्न सत्ताएँ भी नहीं कर सकी हैं।

शिक्षा का क्षेत्र हमेशा सभी दार्शनिकों के लिए एक दिलचस्प क्षेत्र रहा है क्योंकि यह उन्हें अपने विचारों या दृष्टि को एक ठोस आकार देने का साधन प्रदान करता है और कृष्णमूर्ति कोई अपवाद नहीं हैं। जे. कृष्णमूर्ति शिक्षा के बारे में गहराई से चिंतित हैं और एक एकीकृत व्यक्ति को लाने की परिकल्पना करते है जो शारीरिक रूप से स्वस्थ, निडर, मूल्यों के प्रति सच्चा, पूछताछ की भावना, बुद्धिमान, रचनात्मक, अच्छे सौंदर्य बोध, सही व्यवसाय का चयन करता है, और इस प्रकार व्यक्तित्व की पूर्णता प्राप्त करता है और एक नई सामाजिक व्यवस्था का विकास करता है। इस तरह के एक एकीकृत और समग्र व्यक्तित्व के निर्माण के लिए कृष्णमूर्ति ने एकीकृत पाठ्यक्रम और शिक्षाशास्त्र,

एकीकृत शिक्षकों, छोटे आकार के स्कूलों, अनुभव आधारित शिक्षा, प्रकृति के प्रति सम्मान और एक संवेदनशील, निडर और उत्तेजक सीखने के माहौल को बनाए रखने की, प्रतिस्पर्धा को बढ़ावा न देने की और गुणात्मक व रचनात्मक संस्कृति को बढ़ावा देने की वकालत की। नवीनतम राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में उनकी दृष्टि, शैक्षिक विचार, शिक्षा के दर्शन का प्रतिबिंब 21वीं सदी में उनके दर्शन की प्रासंगिकता को सिद्ध करता है।

जीवन परिचय

जे. कृष्णमूर्ति का जन्म 12 मई, 1895 को आंध्रप्रदेश के चित्तूर जनपद के एक छोटे से कस्बे मदनपल्ली में एक धर्म परायण परिवार में हुआ था। इनके पिता जिद्दू नारायनैया ब्रिटिश औपनिवेशिक प्रशासन में अधिकारी थे और इनकी माता संजीवम्मा धार्मिक गृहणी थी। वासुदेव–देवकी की आठवीं संतान श्रीकृष्ण की भांति जे. कृष्णमूर्ति भी अपने माता–पिता की आठवीं संतान थे अतः उन्हीं के नाम पर इनका नाम कृष्णमूर्ति रखा गया। अपनी माता से कृष्णमूर्ति को बहुत लगाव था मगर अल्पायु में ही इनकी माँ का निधन हो गया। 1908 में एनी बेसेंट के आमंत्रण पर पिता, कृष्णमूर्ति और बाकी बच्चों समेत मद्रास के अड़यार स्थित थियोसोफिकल सोसायटी के परिसर में रहने लगे। थियोसोफिकल सोसायटी के प्रमुख सी.डब्ल्यू. लीडबीटर को 13 वर्षीय कृष्णमूर्ति का विरला बात–व्यवहार और आध्यात्मिकता और उनको अक्सर ध्यानमग्न देखकर यह आभास हुआ कि कृष्णमूर्ति वो दिव्य आध्यात्मिक आत्मा हैं जो महान शिक्षक बनकर विश्व का संपूर्ण मार्गदर्शन करेंगे। कृष्णमूर्ति को छोटा भाई मानने वाली एनी बेसेंट भी इस विचार से सहमत हुई। कृष्णमूर्ति के विलक्षण व्यक्तित्व से प्रभावित, एनी बेसेंट ने कृष्णमूर्ति को गोद ले लिया और धार्मिक, आध्यात्मिक वातावरण में उनका पालन–पोषण किया। कृष्णमूर्ति को जनवरी 1911 में मुक्तिदाता के रूप में चुनकर उनकी अध्यक्षता में एनी बेसेंट ने "ऑर्डर ऑफ द स्टार इन द ईस्ट" संगठन स्थापित किया। कृष्णमूर्ति ने 1912 से 1921 तक इंग्लैंड में शिक्षा प्राप्त की। कृष्णमूर्ति को 1927 में एनी बेसेंट ने 'विश्वगुरु' घोषित किया। कृष्णमूर्ति ने इतने बड़े समृद्ध संगठन द्वारा उन्हें केंद्र में रखकर निर्मित की गई मसीहाई छवि को दृढ़तापूर्वक अस्वीकार करके सबको चौंकाया और स्पष्ट विचार रखते हुए कहा कि "सत्य स्वयं के भीतर छुपा अनजान पथ और मार्गरहित भूमि है जिसकी रहनुमाई कोई संस्था, कोई मत नहीं कर सकता।" उन्होंने स्पष्ट शब्दों में कहा कि किसी औपचारिक धर्म, दर्शन अथवा संप्रदाय के माध्यम से सत्य तक नहीं पहुंचा जा सकता और "ऑर्डर ऑफ द स्टेट इन द ईस्ट" संगठन भंग कर दिया। उन्होंने थियोसोफिकल विचारधारा से नाता तोड़कर स्वयं नवीन दृष्टिकोण प्रतिपादित करके स्वतंत्र विचार प्रदान करने आरंभ किए। 17 फरवरी, 1986 को जे. कृष्णमूर्ति मानव को मानवता का पाठ सिखाने वाले अपने विचारों को छोड़कर अनंत में विलीन हो गए।

जे. कृष्णमूर्ति के दार्शनिक विचार –

जे. कृष्णमूर्ति जीवन के रहस्यवादी मार्गों के सबसे ज्यादा निकट पँहुच पाए। जे. कृष्णमूर्ति की शिक्षा उनके गहरे ध्यान, सही ज्ञान और श्रेष्ठ व्यवहार की उपज है जिसने दुनिया के तमाम दार्शनिकों, धार्मिकों और मनोवैज्ञानिकों को प्रभावित किया। जे. कृष्णमूर्ति के अनुसार दुनिया को बेहतर बनाने के लिए जरूरी है यर्थाथवादी और स्पष्ट मार्ग पर चलना। जे. कृष्णमूर्ति के दार्शनिक विचारों को निम्न प्रकार से समझा जा सकता है –

1. तत्त्व विचार –

जे. कृष्णमूर्ति का मानना था कि जीवन विभाजित नहीं हो सकता, वह एक अनंत प्रवाह है अर्थात् जीवन एक अखंड सत्ता है और उसको विखंडित नहीं किया जा सकता है। यही वास्तविक है, सत्य और जीवन की सत्ता है। एक धार्मिक परिवेश में परवरिश होने के कारण उनमें धार्मिक भावना की झलक स्पष्ट दिखाई पड़ती थी। वे ईश्वरीय सत्ता में विश्वास करते थे परंतु उसके स्वरूप को अलग ही मानते थे, उनका मानना था कि ईश्वर की सत्ता की

अनुभूति को विचारों द्वारा संप्रेषित नहीं किया जा सकता। उन्होंने प्रेम पर सबसे अधिक बल दिया। उनका मानना था कि व्यक्ति के अंदर आत्म ज्ञान और आत्म बोध उत्पन्न करना आवश्यक है।

2. प्रमाण विचार –

जे. कृष्णमूर्ति के अनुसार मनुष्य में वैचारिक चिंतन एवं मनन होने की क्षमता उन्हें अन्य प्राणियों से अलग व श्रेष्ठ बनाती है। अपनी वैचारिक क्षमता से ही व्यक्ति ने गहरे सिद्धांतों का प्रतिपादन कर नवीन आविष्कार किए। उनके अनुसार हमारा ज्ञान ही हमारी वैचारिक क्षमता का परिणाम है। उन्होंने ज्ञान के तीन स्वरूपों को माना है –

1. वैज्ञानिक ज्ञान – वैज्ञानिक ज्ञान के अंतर्गत उन्होंने वैज्ञानिक विषयों से संबंधित ज्ञान के साथ गणितीय, भौगोलिक, ऐतिहासिक एवं भाषा शास्त्रीय ज्ञान को प्रमुखता दी है। उनका मानना था कि इन सभी विषयों का ज्ञान तथ्यों के विश्लेषण पर आधारित होता है।
2. सामूहिक ज्ञान – उनके अनुसार सामूहिक ज्ञान पूर्वजों पर आधारित ज्ञान है। पूर्वजों पर आधारित से अभिप्राय मनुष्य अपने ज्ञान एवं अनुभवों को पीढ़ी दर पीढ़ी स्थानांतरित करता है और यह ज्ञान सामूहिक प्रकृति का होता है।
3. व्यक्तिगत ज्ञान – व्यक्ति को दिन प्रतिदिन की क्रियाओं का निर्वाहन करने के लिए ज्ञान की आवश्यकता पड़ती है। संवेदनशीलता और ज्ञान के अभाव में उसे किसी भी चीज का स्पष्ट बोध नहीं होता। उनके अनुसार वास्तविक ज्ञान आंतरिक सत्ता का प्रतीक है। ज्ञान के द्वारा ही व्यक्ति का मार्गदर्शन होता है। इस प्रकार ज्ञान को चेतना द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है।

3. आचार संहिता या मूल्य –

जे. कृष्णमूर्ति के दार्शनिक विचार सार्वभौमिक थे। उनका जीवन भारतीय एवं पाश्चात्य दोनों प्रकार की संस्कृतियों एवं सभ्यताओं से जुड़ा था। इसलिए उन्होंने संपूर्ण विश्व की मानवीय समस्याओं को अनुभव किया। उनका मानना था कि मनुष्य भौतिक साधन संपन्न होने के बाद भी सुखी नहीं है। वह तृष्णा, द्वेष और हिंसा के बोझ से दबा जा रहा है। उन्होंने मानव के बाहरी विकास के साथ–साथ आंतरिक विकास को भी महत्त्व दिया।उनका विचार था कि एक ऐसे समाज का निर्माण हो जिसमें सादगी, प्रेम और सहयोग की भावना हो, जिसमें सदैव प्राणी मात्र के प्रति प्रेम हो तथा जिसमें जाति, धर्म, समाज व संस्कृति आदि के आधार पर विभेद न हो तथा सभी प्रेम और सहयोग की भावना से बँधे रहे। वे चाहते थे कि संसार का प्रत्येक व्यक्ति मुक्ति का अनुभव करें। उन्होंने कहा था कि मेरे जीवन का एकमात्र उद्देश्य लोगों को उस मुक्ति और आनंद को प्राप्त करने में सहायता करना है, जिन्हें मैं स्वयं प्राप्त कर चुका हूँ और यही संपूर्ण मानवता का अंतिम लक्ष्य है।

कृष्णमूर्ति के शैक्षिक विचार –

विचार को व्यवहार में लाने के लिए शिक्षा एक प्रमुख साधन है। कृष्णमूर्ति के शैक्षिक विचार उनके दार्शनिक विचारों के उत्पाद हैं। अपने स्वयं के अनुभवों के आधार पर ही उन्होने अपने दार्शनिक विचारो का प्रतिपादन किया था और इन्हीं दार्शनिक विचारों की निष्पत्ति हैं उनके शैक्षिक विचार। उनका विश्वास था कि यदि इन विचारों के अनुरूप बच्चों को शिक्षा दी जाये तो निश्चित रूप से एक नूतन संस्कृति तथा नूतन विश्व का निर्माण हो सकता है। कृष्णमूर्ति का कहना है कि आज दुनिया में विद्यालयों, महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों की संख्या बहुत तेजी से बढ़ रही है, और इन संस्थाओं में छात्रों की संख्या में अपार वृद्धि हो रही है, हजारों, लाखों की संख्या में पुस्तकें छप रही हैं और शिक्षण क्षेत्र में नयी– नयी खोजें हो रही है लेकिन इस शिक्षा का फल यह है कि छोटे–छोटे युद्धों के साथ–साथ, बड़े–बड़े युद्धों की तैयारी हो रही है, राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय विवादों की संख्या बढ़ रही है। जाति, धर्म, सम्प्रदाय और भाषा के नाम पर संघर्ष हो रहे हैं, साम्यवादी और पूंजीवादी व्यवस्था के नाम पर व्यक्ति–व्यक्ति के रक्त का प्यासा हो गया है, आंतकवाद, जनसंख्या, पर्यावरण, आदि समस्यायें मनुष्य के जीवन को और अधिक

कठिन बना रही हैं। कृष्णमूर्ति का मानना है कि विश्व की सम्पूर्ण समस्याओं की जड़ हमारी दोषपूर्ण वर्तमान शिक्षा व्यवस्था है। इन समस्याओं का समाधान अच्छी शिक्षा ही दे सकती है। जिद्दू कृष्णमूर्ति ऐसी शिक्षा देने की बात करते हैं जिससे व्यक्ति अपनी मूल प्रकृति के अनुरूप विकसित हो। शिक्षा के सन्दर्भ में जिद्दू कृष्णमूर्ति कहते हैं कि – " शिक्षा का उद्देश्य है सही रिश्तों की स्थापना, केवल व्यक्तियों के बीच ही नहीं बल्कि व्यक्ति और समाज के बीच भी। इसलिए यह आवश्यक है कि शिक्षा सबसे पहले अपनी मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया को समझने में व्यक्ति की सहायक हो।"

जिद्दू कृष्णमूर्ति तथ्यों को रटने, परीक्षा उत्तीर्ण करने और उपाधियां प्राप्त करने को शिक्षा नहीं मानते थे। इनकी दृष्टि से यह शिक्षा का एक पक्ष है जो उसे केवल रोजी–रोटी कमाने योग्य बनाता है। वास्तविक शिक्षा वह है जो मनुष्य को आत्मज्ञान कराये।

शिक्षा के उद्देश्य एवं कार्य –

जे. कृष्णमूर्ति का चिंतन देश, काल, परिस्थिति एवं सांस्कृतिक भेदों की सीमा से परे जाकर शाश्वत जीवन को समझने में मानवता की सहायता करना है। यही कारण है कि उनके द्वारा बताये गये शिक्षा के उद्देश्यों में भी उसी शाश्वत सत्य की झलक मिलती है। उनके अनुसार शिक्षा का मूल उद्देश्य एक सन्तुलित मानव का विकास करना है। ऐसा मानव जो चेतनायुक्त हो जो सद्भावना से परिपूर्ण हो जो जीवन का अर्थ और उद्देश्य समझता हो, जो जाति, धर्म, सम्प्रदाय, संस्कृति, क्षेत्र आदि किसी भी आधार पर पूर्वाग्रहों एवं पूर्व धारणाओं से मुक्त हो, जो वैज्ञानिक बुद्धि, तथा आध्यात्मिकता में समन्वय स्थापित कर सकने की सामर्थ्य रखता हो, जो मानव मात्र के जीवन को सुखी बना सकता हो, जो अपने लिए नये मूल्यों का निर्माण कर सकता हो और जो एक नूतन संस्कृति तथा नूतन विश्व का निर्माण कर सकता हो।

जिद्दू कृष्णमूर्ति एवं शिक्षण विधि –

जे. कृष्णमूर्ति व्यावहारिक और सत्यवादी प्रकृति वाले व्यक्ति थे। वे अपने समय की शिक्षा की प्रचलित विधियों को सही नहीं मानते थे। उन्होंने करके सीखने को तथा स्वयं के अनुभव से सीखने को सबसे सर्वोत्तम माना है। वे प्राकृतिक पर्यावरण को शिक्षा का केन्द्र बनाने तथा समस्त ज्ञान व क्रियाओं को उनके माध्यम से विकसित करने के पक्षधर थे। वे ऐसी शिक्षण विधि चाहते थे जिसमें छात्र व अध्यापक के बीच दूरी कम हो और छात्र निष्क्रिय श्रोता न रहकर अनुसंधानकर्ता, निरीक्षणकर्ता तथा प्रयोगकर्ता के रूप में हो। उन्होंने शिक्षण प्रणाली में निम्नलिखित तथ्यों को शामिल करने पर बल दिया है।

1. छात्र की प्रकृति के साथ सम्बन्ध बनाया जाए।
2. छात्र की मानसिक क्षमता जिस प्रकार की हो उसी के अनुरूप शिक्षण पद्धति का चयन करना चाहिए।
3. शिक्षण विधि में ध्यान क्रिया को भी शामिल किया जाए।
4. अनुभव के आधार पर बालक को सीखने के लिए प्रेरित किया जाए।

जे. कृष्णमूर्ति के अनुसार बालक के सम्पूर्ण विकास के लिए वार्तालाप, अध्ययन, स्वाध्याय, अवलोकन निदिध्यासन, प्रयोग, मनन, व्याख्यान, श्रवण व दृष्टान्त विधि को आवश्यक माना है ।

जिद्दू कृष्णमूर्ति एवं पाठ्यक्रम –

जे. कृष्णमूर्ति के अनुसार पाठ्यचर्या ऐसी होनी चाहिए जो सम्पूर्ण मानव का विकास कर सके इसके लिए इन्होंने पाठ्यचर्या में विज्ञान एवं तकनीकी व्यवसायिक प्रशिक्षण, कला, संगीत एवं कविता को स्थान दिया है।

जे. कृष्णमूर्ति द्वारा प्रतिपादित पाठ्यक्रम में निम्न बातों पर विशेष बल दिया गया है –

1. **उद्देश्य आधारित पाठ्यक्रम** – पाठ्यक्रम उद्देश्य पूर्ण होना चाहिए। यदि पाठ्यक्रम निरुद्देश्य होगा तो उसे पढ़ने का कोई अर्थ नहीं है। बालकों के लिये वही विषय सामग्री उपयुक्त होती है जिससे उन्हे अपने उद्देश्य को पूरा करने मे सहायता मिलती है।
2. **अधिगम और उपयोगिता** – पाठ्यक्रम अधिगम में सहायक और भावी जीवन के लिए उपयोगी होना चाहिए। इसकी योजना ऐसी होनी चाहिए जो बालकों की आवश्यकताओं को पूर्ण करने वाली हो।
3. **नैतिक गुणों की** शिक्षा – पाठ्यक्रम को बालकों में नैतिक गुणों का समावेश करने में सक्षम होना चाहिए। कृष्णमूर्ति का कहना है कि आज के युग में टेक्नालॉजी का ज्ञान भी आवश्यक है लेकिन नैतिक गुणों का विकास तो बहुत ही आवश्यक है और इसके लिए नैतिक गुणों की शिक्षा आवश्यक है।
4. **सन्तुलित पाठ्यक्रम** – जे. कृष्णमूर्ति के अनुसार पाठ्यकम ऐसा होना चाहिए जो सम्पूर्ण मानव का विकास कर सके, इसलिए उन्होंने एक संतुलित पाठ्यक्रम को बालकों के लिए आवश्यक और उपयोगी माना उन्होंने बालक के संतुलित व्यक्तित्व की परिकल्पना की थी, जिसे संतुलित पाठ्यक्रम के माध्यम से ही प्राप्त किया जा सकता है। जहाँ बालकों को अपनी प्राचीन संस्कृति को बनाये रखना है वहीं आधुनिकता से जुड़ना भी आवश्यक है। इसलिए उन्होंने पाठ्यक्रम में जहाँ भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान, जीव विज्ञान, गणित, तकनीकी, व्यावसायिक शिक्षा को महत्व दिया वहीं इतिहास भूगोल, कला, संगीत और कविता पर भी बल दिया।

मूल्यांकन पद्धति

जे. कृष्णमूर्ति मूल्यांकन की प्रचलित परम्परा को स्वीकार नहीं करते हैं क्योंकि मूल्यांकन की यह प्रणाली विद्यार्थियों में प्रतिस्पर्धा, तुलना और महत्वाकांक्षा उत्पन्न करती है। इसमें प्रथम आने की दौड़ में पीछे या विफल होने वाले विद्यार्थी हताशा, कुंठा, और भय से ग्रसित हो जाते हैं, जिससे उनके समग्र व्यक्तित्व का विकास नहीं हो पाता। कृष्णमूर्ति विद्यार्थियों को सम्बोधित करते हुए कहते हैं, "जब शिक्षक कक्षा में किसी दूसरे से आपकी तुलना करता है आपको उससे भिन्न कम या अधिक अंक देता है, भिन्न श्रेणी प्रदान करता है, तो ध्यानपूर्वक स्वयं का निरीक्षण करें, इस प्रकार से आपको नष्ट किया जाता है, आपकी प्रतिभाएं आपकी चेतना भीतर तक कुंठित हो जाती है।" कृष्णमूर्ति यद्यपि लिखित परीक्षा पर आधारित मूल्यांकन प्रणाली के विरुद्ध है; फिर भी वे व्यावहारिक रूप से परीक्षा प्रणाली के तत्काल समाप्ति के पक्ष में भी नहीं है क्योंकि प्रत्येक विद्यार्थी की प्रगति का कोई न कोई आधार और रिकॉर्ड तो रखना पड़ेगा। कृष्णमूर्ति शिक्षकों से यह अपेक्षा करते हैं कि प्रत्येक विद्यार्थी की इस प्रकार से सहायता की जाये जिससे वह सतत सीख सके। जे. कृष्णमूर्ति ने अनेक शिक्षकों से वार्ता कर विद्यार्थियों में तुलना, प्रतियोगिता, परीक्षा भय, और प्राप्तांक परीक्षा प्रणाली को समाप्त करने पर बल दिया। अतः सम्यक शिक्षा में परीक्षा प्रणाली और मूल्यांकन प्रणाली के स्थान पर नवीन व्यवस्था की आवश्यकता है जहाँ विद्यार्थी का सीखना, प्रज्ञावान होना, और सृजनशील होना आदि महत्वपूर्ण है न कि अधिकाधिक प्रप्तांक लाना।

जिद्दू कृष्णमूर्ति एवं विद्यालय

जे. कृष्णमूर्ति कहते हैं कि विद्यालयों में कार्य करने वाले लोगों का एक महत्वपूर्ण कार्य यह भी है कि वे शिक्षार्थियों को उनकी आजीविका के लिए शैक्षिक विषयों की जानकारी देने के साथ–साथ उनमें सम्पूर्ण मानव जाति एवं सम्पूर्ण मानव जीवन के लिए उत्तरदायित्व का वृहद बोध करायें। उनके अनुसार एक विद्यालय का अर्थ ही है वह जगह जहाँ शिक्षार्थी मूल से प्रसन्न एवं आनन्दित रहता है, जहाँ उसको डराया–धमकाया नहीं जाता, जहाँ वह परीक्षाओं से भयभीत नहीं होता तथा जहाँ उसे एक ढाँचा या, एक पद्धति के अनुसार कार्य करने के लिए बाध्य नहीं किया जाता। यह वह स्थान है जहाँ सीखने की कला सिखायी जाती है। अगर शिक्षार्थी प्रसन्न और आनन्दित नहीं है तो वह इस कला को सीखने में असमर्थ रहता है।

जिद्दू कृष्णमूर्ति एवं शिक्षक

जे. कृष्णमूर्ति ने शिक्षक को अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान दिया है। उनके अनुसार शिक्षक अच्छे व्यक्तित्व वाला एकीकृत मानव होना चाहिए। उसे धैर्य का प्रतीक होना चाहिए। उसका व्यवहार छात्रों से मैत्रीपूर्ण होना चाहिए। छात्रों को स्वयं सीखने के लिए प्रेरित करना चाहिए। कृष्णमूर्ति का विचार है कि एक आदर्श शिक्षक वही है जो सत्ता व राजनीति के भ्रष्ट प्रभाव से दूर रहकर अपना शिक्षण कार्य पूर्ण ईमानदारी व निष्ठा से करे। पढ़ाने, बताने तथा सिखाने का कार्य करे तथा स्वार्थपरता एवं अहंकार को समझने तथा उनसे मुक्ति पाने में अपने शिष्यों की सहायता करे। उनका कहना था कि वर्तमान शिक्षा की प्रकृति पूरी तरह प्रतियोगिता, प्रतिस्पर्धा, महत्वाकांक्षा और बाह्य सम्पन्नता का संवर्धन करने में सहायता कर रही है। कृष्णमूर्ति शिक्षकों से अपेक्षा करते हैं कि वे इस प्रकार की शिक्षा के हानिकारक परिणामों एवं इसके प्रभावों को गम्भीरता से समझें तथा इससे मानवता को होने वाले दुष्परिणामों से बचाने में योगदान करें। कृष्णमूर्ति ऐसे शिक्षक के पक्षधर थे जिसमें निम्नलिखित योग्यताओं का समावेश हो–

1. शिक्षक को सृजनशील होना चाहिए।
2. शिक्षक को तकनीकी का समुचित ज्ञान होना चाहिए।
3. शिक्षक ऐसा हो जो छात्रों का पथ प्रदर्शन करे तथा उसका व्यवहार मित्रतापूर्ण हो।
4. शिक्षक को विद्यार्थियों में छुपी हुई प्रतिभा को उजागर करने वाला होना चाहिए।
5. शिक्षक में बालकों की रचनात्मक शक्तियों का विकास करने की योग्यता होनी चाहिए।
6. शिक्षक में ऐसा वातावरण उत्पन्न करने की योग्यता होनी चाहिए जिससे छात्र स्व अनुभव द्वारा सफलतापूर्वक सीख सकें।
7. शिक्षक इतना परिपक्व हो कि वह छात्रों को भली–भाँति समझ सके।

जिद्दू कृष्णमूर्ति एवं शिक्षार्थी –

जे. कृष्णमूर्ति अपने शिक्षार्थी को अति महत्वपूर्ण मानते हैं। उनके अनुसार शिक्षार्थी में गुरू के प्रति पूर्ण प्रतिबद्धता होनी चाहिए। उसे गुरू के अनुभवों से सीखना चाहिए और सत्य की खोज में लगे रहना चाहिए उसको भयमुक्त होना चाहिए जे. कृष्णमूर्ति कहते हैं कि शिक्षार्थी को बचपन से ही उसके व्यक्तित्व के विकास के लिए मुक्त कर देना चाहिए। उसको अपने अनुरूप किसी सांचे में नहीं ढ़ालना चाहिए। धार्मिक विश्वास एवं कर्मकाण्ड के नियम आशायें और आकाक्षांए वास्तविक कर्म नहीं होते, ये सब बाधाएं है और यदि हम शिक्षार्थी का विकास इन प्रभावों से मुक्त होकर होने दे तो सम्भवतः जैसे–जैसे वह परिपक्व होगा वैसे–वैसे यथार्थ की, ईश्वर की और उसके स्वरूप की खोज करेगा।

जिद्दू कृष्णमूर्ति एवं अनुशासन –

जे. कृष्णमूर्ति का अनुशासन शिष्यत्व से जुड़ा है क्योंकि अनुशासन का सम्बन्ध सीखने से है, अनुशासन का अर्थ किसी चीज का अनुकरण करना नहीं है बल्कि अनुशासन का अर्थ अपनी प्रतिक्रियाओं, अपनी पृष्ठभूमि और इनकी सीमाओं के बारे में सीखना है लेकिन इसका सामान्य अर्थ होता है बड़ों के अनुसार स्वयं को बनाना। माता–पिता, शिक्षक जो कुछ कहते है, उसके अनुरूप चलना, किसी एक इच्छा का प्रतिरोध करना तथा दूसरे को महत्व देना, किसी कार्य को किसी विशेष तरीके से पूरा करना ही अनुशासन समझा जाता है। कृष्णमूर्ति जी के अनुसार बलपूर्वक थोपा गया अनुशासन महत्वहीन तथा भयानक होता है। उनका कहना है कि वास्तविक अनुशासन का निवास तो मन की अखण्ड सत्ता में निहित होता है। मन की समस्त विसंगतियों को समझने के उपरान्त ही वास्तविक अनुशासन का अस्तित्व प्रकट होता है। कृष्णमूर्ति का कहना है कि यदि प्रेम करते है तो अनुशासन की आवश्यकता ही नहीं रह जाती प्रेम स्वयं सृजनात्मक बोध क्षमता लाता है, इसलिए वहाँ न प्रतिरोध होता है और न संघर्ष।

निष्कर्ष –

स्पष्ट है कि जे. कृष्णमूर्ति का दर्शन मानवीय समस्याओं पर विचार करके उसके निराकरण को प्रस्तुत करनेवाला यथार्थवादी दर्शन है, जिमसें मानवीय समस्याओं का निदान आवश्यक है। जे. कृष्णमूर्ति मुक्ति एवं आनंद को ही जीवन का एकमात्र उद्देश्य मानते थे और उसे ही मानव मात्र का अंतिम लक्ष्य भी बताते हैं। जे. कृष्णमूर्ति ने जीवन को उनकी अंतर गहराइयों तक समझने तथा लोगों को जागृत करने में अपना संपूर्ण जीवन समर्पित कर दिया। उनकी दृष्टि परपंराओं की लीक से हटकर जीवन के वास्तविक तथ्यों को वस्तुपरक एवं प्रत्यक्ष दर्शन कराने में सहायक सिद्ध होती है। उन्होंने कहा कि मनुष्य को स्वबोध के जरिए अपने आपसे परिचय करते हुए स्वयं को भय, पूर्वसंस्कारों और रूढ़िबद्धता से मुक्त करना होगा। कृष्णमूर्ति के अनुसार उचित शिक्षा के महत्व को समझने के लिए हमें जीवन के अर्थ को उसकी समग्रता में समझना पड़ेगा और उसके लिए आवश्यक है कि हम सीधे और सच्चे तौर पर विचार कर सकें, न कि केवल सुसंगत तार्किक ढंग से। दृढ़ता और सुसंगत ढंग से सोचने वाला व्यक्ति विचारहीन होता है, क्योंकि वह किसी प्रारूप का अनुयायी होता है वह वाक्यों को दोहराता है तथा एक लीक पर ही सोचता है। अस्तित्व को निष्कर्षों या सिद्धान्तों में नहीं समझा जा सकता। जीवन को समझने का अर्थ स्वयं अपने को समझना है और यही सही शिक्षा का आरम्भ और अंत भी है। जानकारी इकट्ठी करना तथा तथ्यों को बटोर कर उन्हें आपस में मिलाना ही शिक्षा नहीं है, शिक्षा तो जीवन के अभिप्राय को उसकी समग्रता में देखना–समझना है परन्तु किसी समग्रता को उसके टुकड़ों के माध्यम से नहीं देखा जा सकता, जबकि सरकारें, संगठित धर्म एवं सत्तावादी दल, सभी यही करने का प्रयत्न कर रहे हैं। शिक्षा को गहरे जीवन–मूल्यों की खोज में हमारी सहायता करनी चाहिए, ताकि हम फार्मूलों से ही न चिपके रहें या नारों को ही न दोहराते रहें। क्योंकि वे मानव–मानव के बीच शत्रुता पैदा करते हैं। दुर्भाग्य से शिक्षा की वर्तमान व्यवस्था हमें गुलाम, यंत्रवत और घोर विचारहीन बना रही है। हालांकि बौद्धिक रूप से वह हमें जगाती भी है परन्तु आन्तरिक रूप से वह हमें अपूर्ण, कुंठित और यंत्रवत बना डालती है, जिसमें सृजनशीलता के लिए कोई स्थान नही रहता। शिक्षा का लक्ष्य केवल विद्वानों, टेक्नीशियनों तथा नौकरी की तलाश में लगे लोगों को तैयार करना ही नहीं है, उसका लक्ष्य ऐसे पूर्ण स्त्री एवं पुरूष बनाना है, जो भय से मुक्त हो। क्योंकि केवल ऐसे ही व्यक्तियों के बीच में स्थायी शान्ति संभव है। कृष्णमूर्ति जी के अनुसार सम्यक शिक्षा वही है, जो विद्यार्थी की इस जीवन का सामना करने में मदद करे ताकि वह जीवन को समझ सके, उससे हार ना मान ले, उसके बोझ से दब न जाएं, जैसे कि हममें से अधिकांश लोगों के साथ होता है। आपकी शिक्षा ऐसी हो कि वह आपको इस दबाव को समझने के योग्य बनाए, इसे उचित ठहराने के बजाय आप इसे समझे और इससे बाहर निकले केवल परम्परागत ढंग से ही विचार करते न रह जाऐं, एक मनुष्य होने के नाते आप आगे बढ़कर कुछ नया करने में सक्षम हो सकें।

सन्दर्भ सूची

1. कृष्णमूर्ति जे. (2008) शिक्षा क्या है? कृष्णमूर्ति फाउंडेशन इंडिया, वाराणसी।
2. लाल, रमन बिहारी़ (2007).भारतीय शिक्षा का विकास एवं उसकी समस्याऐं, रस्तोगी पब्लिकेशन, मेरठ।
3. कृष्णमूर्ति जे. (2004) ध्यान, कृष्णमूर्ति फाउंडेशन इंडिया, वाराणसी।
4. कृष्णमूर्ति जे. (2004) मानवता का भविष्य, कृष्णमूर्ति फाउंडेशन इंडिया, वाराणसी।
5. कृष्णमूर्ति जे. (2003) गरुड़ की उडान, कृष्णमूर्ति फाउंडेशन इंडिया, वाराणसी।
6. कृष्णमूर्ति जे. (2002) ध्यान में मन, कृष्णमूर्ति फाउंडेशन इंडिया, वाराणसी।
7. कृष्णमूर्ति जे. (2000) आंतरिक प्रस्फूटन, कृष्णमूर्ति फाउंडेशन इंडिया, वाराणसी।
8. कृष्णमूर्ति जे. (2000) जीवन की पुस्तक, कृष्णमूर्ति फाउंडेशन इंडिया, वाराणसी।
9. कृष्णमूर्ति जे. (2000) युद्ध और शांति, कृष्णमूर्ति फाउंडेशन इंडिया, वाराणसी।
10. कृष्णमूर्ति जे. (2000) वाशिंगटन वार्ताएँ, कृष्णमूर्ति फाउंडेशन इंडिया, वाराणसी।

11. कृष्णमूर्ति जे. (1999) आमूल क्रांति की आवश्यकता, कृष्णमूर्ति फाउंडेशन इंडिया, वाराणसी।
12. कृष्णमूर्ति जे. (1988) काल और काल से परे, कृष्णमूर्ति फाउंडेशन इंडिया, वाराणसी।